महाकाव्य

मानस संगम

देवत्रिवेदी

गोलोकवासी

पं. रामनारायण जी मिश्र

(पं० त्रिभुवन नाथ मिश्र के पूज्य पिताश्री)
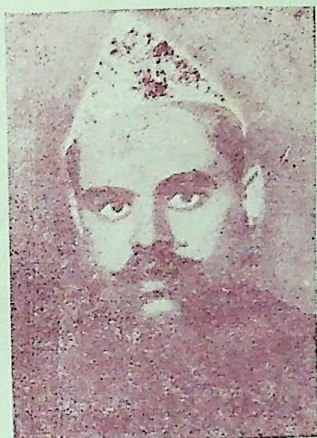
की **पुण्य स्मृति** में

देव नारायण त्रिवेदी 'देव'

कृत

(महाकाव्य)

" रामेश्वरम् "

लोकार्पण

श्री गिरिराज शाह

आई० पी० एस०

उत्तराखण्ड शोध संस्थान

समर्पण

[illegible]तुलसी

पं. रामशंकर उपाध्याय

बद्री नारायण तिवारी

संयोजक

संभव हो सका

वस्तुत: रामकथा के प्रचार-प्रसार में अनेक विधाओं का प्रयोग हुआ है। संस्कृत के श्लोकों से जो परम्परा प्रारम्भ हुई उसको हिन्दी में छंदों, दोहों, चौपाइयों के माध्यम से विश्वकवि तुलसीदास ने व्यापकता प्रदान की – दूसरी ओर तुलसी की सार्वजनिक रामलीला के होने से सर्वहारा से रामकथा जन-जन से जुड़ी। रामकथा को गद्य क्षेत्र में भी उपन्यासों तथा आधुनिक खड़ी बोली में काव्य रचना के महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' कृत 'राम की शक्ति पूजा' नरेश मेहता, डॉ. जगदीश गुप्त, शैलेश जैदी, डॉ. आकुल वर्तमान समय में आधुनिक कविता की मंदाकिनी सतत् प्रवाहित कर रहे हैं।

इस काव्यकृति के रचयिता अनुज श्री देवनारायज त्रिवेदी 'देव' ने 'रामेश्वरम्' विगत वर्ष मानस संगम को प्रकाशन हेतु प्रदान की थी। मानस संगम भी अपने अर्थाभाव के कारण विगत वर्ष प्रकाशित न कर सका। विश्वकवि तुलसी पंचशती वर्ष में इसका मुद्रण संभव हुआ। साहित्य-संस्कृति निष्ठ पं. त्रिभुवन नाथ मिश्र द्वारा अपने पूज्य पिताश्री की पावन स्मृति में 'रामेश्वरम्' के प्रकाशन में पूर्ण सहयोग प्रदान करने पर यह कृति पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो सकी।

इस काव्य कृति का पुरोवाक् प्रख्यात साहित्य मनीषी श्री शंभु नाथ जी (भा०प्र० सेवा) ने अपनी कलम से लिखकर पुस्तक की गरिमा को गौरवान्वित किया। हम मिश्रा जी के साथ ही श्री शंभुनाथ जी को जो अपनी प्रशासनिक व्यस्तताओं में भी साहित्य सृजन की धारा प्रवहमान करते हैं मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

मुद्रण में श्री आई. एस. मिश्रा तथा उसकी सुव्यवस्था में श्री अरुण कुमार मिश्रा का महत्वपूर्ण योगदान तथा विशेष रुचि लेने पर ही प्रस्तुत पुस्तक इतनी शीघ्रता में आपके हांथों आ सकी।

बद्री नारायण तिवारी

महान संतकवि रविदास जयंती
'माघपूर्णिमा' २२ फरवरी, १९९७

रा
मे
श्व
र
म्

रामेश्वरम् (महाकाव्य)

रचयिता–देव नारायण त्रिवेदी 'देव'

प्रकाशक–'मानस संगम'
महाराज प्रयाग नारायण मन्दिर (शिवाला)
कानपुर–२०८ ००१

प्रथम संस्करण–१९९७

मूल्य–बीस रुपये
पुस्तकालय संस्करण सजिल्द पचास रुपये

आवरण एवं सज्जा–डॉ० दुर्गा प्रसाद शर्मा
(रतलाम)

मुद्रक–एलोरा प्रिंटर्स
सूटरगंज, कानपुर–१ (फोन २९०२९१)

RAMESHWARAM (POETRY)
BY
DEVNARAIN TRIVEDI 'DEV'

अपनी ओर से

वैसे तो स्फुट काव्य लेखन का मेरा क्रम वर्षों पुराना है परन्तु खण्ड काव्य के रूप में किसी कथा को बांधने का यह मेरा प्रथम प्रयास है। इस प्रयास को बल प्रदान करने का कार्य मानस एवं राम कथा को समर्पित विद्वान एवं सद्साहित्य के प्रेरक डॉ० बद्री नारायण तिवारी, संस्थापक मानस संगम ने राम को समर्पित अपने अप्रतिम व्यक्तित्व द्वारा किया है, उसी का परिणाम यह कृति मानस मर्मज्ञों को सादर समर्पित कर रहा हूँ।

राम–कथा ज्ञान, भक्ति दोनों ही क्षेत्रों को समान रूप से प्रभावित करती चली आई है। यही कारण है कि भौतिक परिधियों में आवद्ध मेरा अन्तराल भी प्रभु राम के पावन चरणों में विनत हो उठा और अपने भीतर के भावों को रुपाकार देने के लिए मैंने राम-कथा का आश्रय ग्रहण किया।

निरन्तर कुछ न कुछ नया लिखने की प्रेरणा देने वाले कवि श्री शम्भूदयाल सिंह "सुधाकर" के सम्पर्क में रहकर मेरी साहित्य साधना को प्रखरता प्राप्त हुई। उनके द्वारा दी गई प्रेरणा के प्रति मैं उन्हें साधुवाद देना अपना प्रथम कर्तव्य समझता हूँ।

कृति पूर्ण हो जाने पर मैंने इसकी पाण्डुलिपि अपने अग्रज डॉ० गिरिजा शंकर त्रिवेदी, संपादक, नवनीत, बम्बई को दिखायी तो वे आश्चर्यचकित होकर रह गये। उन्हीने कृति को आद्योपांत पढ़ा और अपने विचार भी प्रदत्त किये जिनका समावेश इस कृति में किया गया है। वे मेरे अग्रज हैं उनका आशीर्वाद तो मुझे मिलना ही मिलना है। उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना एक औपचारिकता ही होगी।

इस कृति को परोक्ष रूप से अपनी साहित्य साधना द्वारा प्रेरित करने का कार्य श्री कमला शंकर त्रिपाठी, जनपद रायबरेली के वरेण्य कवि डॉ० शिवबहादुर सिंह भदौरिया, शम्भुशरण द्विवेदी "बन्धु"। श्री कन्हैयालाल सिंह एडवोकेट, कृष्णानन्द श्रीवास्तव, कवि सुदामा, श्री प्रमोद शंकर शुक्ल, श्री वीरेन्द्र सिंह

आनन्द, आनन्द टाइम्स, रायबरेली, श्री ब्रजेश शुक्ल, श्री राजाराम भारतीय एव अभिन्न मित्र एवं सहयोगी श्री स्वप्निल तिवारी द्वारा समम समय पर वार्ताओं एवं कवि गोष्ठियों में किया गया, जिसका प्रभाव भी मेरी यह कृति ग्रहण कर रही है। इसके लिए मैं अपने समस्त सहयोगियों एवं सद्परामर्श देने वाले बन्धुओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं।

राम की कथा को इस लघु कृति के माध्यम से कितना समेट पाया हूँ तथा कितने भाव समर्पित कर सका हूँ—यह तो विज्ञ पाठक ही बता पायेंगे।

अस्तु मैं अपनी यह कृति "रामेश्वरम्" आपके हाथों में सौंपते हुए हर्ष का अनुभव कर रहा हूं। डॉ० बद्रीनारायण तिवारी द्वारा आयोजित मानस संगम में प्रतिवर्ष पहुँचते रहने से मुझे देश विदेश के जिन मानस मर्मज्ञ विद्वानों के प्रवचन से प्रेरणा प्राप्त हुई उन सबको भी सादर आभार व्यक्त करते हुए मुझे विश्वास है कि राम भक्त जन इसे अवश्य अपनायेंगे।

—देवनारायण त्रिवेदी "देव"
बी० १/११ क्रांतिपुरी
जेलगार्डेन रोड
रायबरेली

दिनांक : ०१-१०-९५

सम्मति

'रामेश्वरम्' खण्ड काव्य में कवि श्री देव-नारायण त्रिवेदी 'देव' ने रामकथा को नया आयाम दिया है। कृति का शिल्प विधान, छन्द संयोजन एवं कथ्य संचयन सराहनीय है। राम के कृतित्व एवं व्यक्तित्व को विषय बनाकर सृजित कृतियों में श्री देव की इस कृति की पृथक मूल्यवत्ता सहज ही निरूपित हो गई है। कृति पठनीय एवं संग्रहणीय है। मैं कृतिकार श्री देव को ऐसी कृति के सृजन के लिए बधाई देता हूँ।

—डॉ० शिव बहादुर सिंह भदौरिया

लालगंज, रायबरेली

१३-१०-१९९५

पुरोवाक्

वर्तमान समय में राम के चरित्र और उनसे जुड़े विविध प्रसंगों को रचनाकारों द्वारा स्फुट और प्रबंधात्मक स्वरूप देने के कार्य के साथ ही चरित्र और प्रसंगों के मर्म में छिपे तथ्य को उद्घाटित करने की तथा उन्हें नवीन सत्यों और तथ्यों से परिपूर्ण करने की जो श्रृंखला बद्ध परिपाटी चली है, उससे निःसंदेह हिन्दी साहित्य समृद्ध हुआ है।

इसी क्रम में मुझे श्री देव नारायण त्रिवेदी "देव" द्वारा सृजित 'रामेश्वरम्' खण्ड काव्य की पाण्डुलिपि देखने का अवसर मिला। महाकवि तुलसीदास के शब्दों में—

भाव कुभाव अनख आलसहू।
राम नाम मंगल दिशि दसहू॥

को चरितार्थ करता हुआ जहाँ यह बोध सम्पूर्ण राम साहित्य में परिव्याप्त है वहीं इस बोध से दीप्त देव जी के "रामेश्वरम्" खण्ड काव्य में राम अंतराल के चिंतन को भी प्रभावकारी रीति से व्यक्त किया गया है।

कवि ने इस खण्ड काव्य का प्रारम्भ भारत वन्दना से किया है :—

वन्दना भारत धरा की
जोकि सारे विश्व में
अभिनय अनोखी है।
हिमालय का मुकुट धर
गगन चुम्बित
अस्मिता इसकी
रहो अक्षुण्य
सदियों से।

कणे कणे रमन्ति इति रामः के परिप्रेक्ष्य में यह भारत वन्दना का मंगलाचरण कृति की नई दिशाओं को भी इंगित करता है।

श्री 'देव' ने अपने खण्ड काव्य में राम की परम्परागत छवि को ही ग्रहण किया है। खण्ड काव्य का कथा-विस्तार पंचवटी से प्रारम्भ होकर सागर तट

पर जाकर राम के समग्र चिन्तन के साथ परिपूर्ण होता है। इस कृति में कवि ने अतुकांत परन्तु प्रवाहमय छन्द का प्रयोग किया है जो पाठक को अपनी ओर निरन्तर अनायास खींचता जाता है। प्रारम्भ की पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :—

पंचवटी में
स्फटिक शिला पर
वलकल वसन पहन
बैठे थे राम।

खण्ड काव्य में चिंतन की पृष्ठ भूमि में राम के जन्म से लेकर विविध प्रसंगों को कवि ने रचना का विषय बनाया है। कृति में प्रकृति-चित्रण सम्मोहक है :–

पाकर जम्बु रसाल
मधूकों की
वर शोभा
टेसू के सिर सजी
किरीटी वन्हि ज्वाल की
बिछी चतुर्दिक
श्यामल सस्य धरा
आसन् वत्

वन्य नारियों द्वारा जानकी को पत्र-पुष्प आभूषण से सुसज्जित किये जाने की इन पंक्तियों में आदिवासियों के भीतर के अनुराग को रचनाकार ने अपनी रचना-दृष्टि से देखा है :—

श्याम वर्ण
आभा से मंडित
दीप्त नयन खंजन में
भर अनुराग अलौकिक
सबने मिलकर
सजा दिये
जानकी गात पर
पुष्पों के
अनगिन आभूषण।

राम का जन-मन रंजनकारी स्वरूप कृति में सर्वत्र उभरता दृष्टिगत होता है। कृति में राम स्वयं स्वीकार करते हैं कि उनके मर्यादा पुरुषोत्तम आचरण में उनका कुछ भी नहीं है. अपितु सब कुछ उन्होंने अपने पूर्वजों से पाया है, जो आदर्श के लिए अपना जीवन समर्पित करते रहे। वस्तुतः यह अहंकार शून्य विनम्रता राम की महानता का प्रभावपूर्ण संकेतक है। इसी क्रम में रचनाकार ने राम के पूर्ववर्ती कुल-पुरुषों के आदर्श चरित्रों को भी उद्घाटित किया है। राम अपने पूर्वजों का गौरवपूर्ण स्मरण करते हुए अपने लिए आकांक्षा करते हैं:—

मेरा जीवन
बने तपस्वी
नित प्रति परहित कामी।
जन जन का
मैं किंकर
होना नहीं चाहता स्वामी।
जग में मानवता
विकसित हो
दानवता–तम भागे।
यही चाहता
भारत भू पर
नया नया युग जागे।

सागर तट पर राम की समाधि का चित्रण कवि ने योगानुरुप किया है। कुण्डलिनी जागरण, चक्रों पर आरुढ़ होते राम का निर्विचार समाधि तक पहुंचने का चित्रण कवि ने मनोयोग से किया है:—

निर्विचार की
ओर बढ़ रहे
पदमासन निबद्ध
ग्रीवारिजु
पलकें बन्द
नयन सस्थिर मति।
जागृत है
कुण्डलिनी सीता

मूलाधर
चक्र से उठकर
सहज उर्ध्व है
प्राण–अस्मिता ।

अंततः कृति, छन्द, कथा प्रवाह एवं नवीन भावों के उद्घाटन में सराहनीय है। मैं इस विलक्षण कृति की सर्जना के लिए श्री देव नारायण त्रिवेदी "देव" को साधुवाद देता हूँ और विश्वास करता हूँ कि इस कृति का सर्वत्र समादर होगा।

– **शम्भुनाथ**
आई०ए०एस०
१/५६ त्रिशाल खण्ड, गोमती नगर,
लखनऊ

१–१०–१६६५
विजय दशमी

मंगलाचरण

वंदना भारत-धरा की
जो कि सारे विश्व में
अभिनव अनोखी है,
यहां हर रंग की मिट्टी
यहां की, सलिल से
परिपूर्ण नदियों की
अमित् शोभा चिरंतन ।
और गंगा सी नदी का
अर्घ्य जो विधि ने चढ़ाया
इस धरित्री पर
सजी है वारि से
यह श्यामला
परिपूर्ण सस्या,
हिमालय का मुकुट धर
गगन चुम्बित
अस्मिता इसकी
रही अक्षुण्य
सदियों से ।

यहीं यमुना के किनारे
रच दिये वे पृष्ठ स्वर्णिम
कृष्ण ने
जो विश्व को
करते चमत्कृत !
बाल लीलायें अलौकिक
बांसुरी वादन
चुराना हो चपल
नवनीत का,
वह रास लीला
और गोवर्धन शिखर को
एक उंगली पर उठाना
गोपियों को प्रेम का
संदेश देना
धन्य है यह धरा व्रज की।

कुरुक्षेत्र महान
जिसमें आज भी
होती प्रवाहित
ज्ञान की गीता।
सतत् गतिमान कृष्णा
और कावेरी
महानद सिन्धु
सरयू ब्रह्मपुत्र प्रयाण।
देती आ रही
संदेश कब से

विश्व को गतिमान।
इसी धरती पर
रचे थे रास माधव ने
दिया शिव ने
इसे था सतत्
अवढर दान।

ब्रह्मा विष्णु गौतम
और गांधी ने
प्राण अर्पित कर
सजाया है जिसे।

हो गये संचित
आत्म दर्शन,
ज्ञान प्रज्ञा योग
लक्षण ग्रंथ कितने।
गा रहा है
विश्व अब तक
जिस प्रभा का गान।
इसी धरती पर
हुए थे राम
कण-कण में बसे जो
आज भी सम्बल बने
धनु बाण लेकर।

धर्म के रक्षार्थ
औ परित्राण हित

सज्जन जनों के,
जो गये वनवास।
जानकी
जो भक्ति रूपा
प्रकृति की
सम्पूर्ण सत्ता की
विधात्री शक्ति,
शोभित
राम के बामांग।
राम
सारे विश्व में
अभिनव अनोखे
ईश के अवतार।
पुरषोत्तम प्रभा मण्डल
अलौकिक।
प्रकाशित हो रहा
जिनका दिनों दिन
विश्व में विस्तार।
वंदना है
उस सनातन धर्म की
जिसने बहा दी
ज्ञान की अध्यात्म की
दर्शन तथा विज्ञान की
भूगोल ज्योतिष
तर्क मीमांसा सहित

इतिहास नीति विधान की,
सांस्कृतिक चेतन
अस्मिता की
जीवनी धारा ।
करता वंदना मैं
धरा की
आकाश की
उत्तुंग हिमगिरि श्रृंग की।
उस ईश की
जो व्याप्त है
चर अचर में इस सृष्टि के
अवद्वैत होकर भी
हुआ जो
द्वैत भावों से प्रभासित।
मेरी लेखनी को
मिले यह वरदान
माता भारती की
बजे वीणा,
मैं करुं नित
राम का गुणगान ।
कर लूं धन्य
जीवन की नियति को।
काव्य मय हो जाये
जीवन प्राण
मिले मुझको
ताप भव से त्राण।

*

प्रथम

पंचवटी में
स्फटिक शिला पर
बलकल वसन पहन
बैठे थे राम,
रहे जो
चक्रवर्ति दशरथ के
प्यारे
राजदुलारे।

कनक भवन में
क्रीड़ा करते
अनुजों के संग।
माता कौशल्या
केकई, सुमित्रा सबके
आंखों के तारे
कुल भूषण।

तपः पूत
रघुकुल के दीपक।
परिजन
पुरजन जिन्हें देखा
हर्षित होते थे।

देव वृंद
गुण-गान
सदा करते थे ।
जिनका ।

पारब्रह्म
परमेश्वर
जो उतरे थे भूपर ।

मर्यादा आदर्श
सत्य करुणा-प्रवाह से
भरा हुआ था
जिनका जीवन ।

रथ पर चढ़
जाते अहेर को ।
स्वर्णजटित
पदत्राण पहन
पीताम्बर भूषित,
अनुजों के संग ।

स्वर्ण खचित
धनु बाण
सुशोभित
पृष्ठ भाग पर
तरकश बांधे ।

वृषभस्कंध
अजानु बाहु
रवि-प्रभा विमंडित ।

वदन चारू
सुषमा सम्पूरित
मंद मंद मुस्कान
दुग्ध दंतावलि
सरसिज अधर
नयन खंजन रतनारे ।

अखिल भुवन के ईश
और जन जन के प्यारे ।

दशरथ कौशल्या के
तप से
पूर्वजन्म के,
मिले हुए वरदान रूप में

स्वयं उतर आये
धरती पर
राम राज्य
करने स्थापित ।

वे आदर्श पुरुष
वसुधा के
पूर्ण विश्व के
एक विराट
अभिराम
मनोहर ।

वपु किशोर वय
विश्वामित्र महर्षि

मांगने आये
नृप से ।

सोच रहे थे राम
वहीं से
परिवर्तन के क्षण
जीवन में
आये कितने ।

घटनाओं से भरे
दिवस कितने ही बीते ।

जीवत-यान
अजस्र
त्वरित गति
बढ़ा निरन्तर ।

सती अहल्या-तरण
मरण
निशिचर समूह का
जैसे
वाल केलि ही थे सब ।

जा विदेह के नगर
पुष्प चुनने को जाना
जीवन के
रस राग रंग के
ज्योतित क्षण वे ।

जहां मिली जानकी
प्रकृति की
सुन्दरता के
आसव से
रच दिया
विधाता ने
जिसको था।

एक राम के लिए
सहज
अर्पित करने को।
पुरुष अर्घ्यवत्।

या धरती ने
सब संचित
पुण्यों से
रचा कलेवर था
सीता का।

मिथिला के
राजर्षि जनक को
धरती के वरदान सरीखी
मिली जानकी।

भुवन मोहिनी
छवि से
आच्छादित था।

जिसका
पूर्ण कलेवर ।

पुरुष राम की
प्रकृति सुन्दरी
प्रतिनिधि थी
जो महाशक्ति की ।
सरस्वती काली लक्ष्मी का
एकाकार स्वस्थ--
विश्व के
उद्‌भव स्थिति की
प्रेरक जो ।

वही
जन्म लेकर नारी का
मिली जनक को ।

उनके तप के
पुण्य फलों सी
महामहिम
महिमा से मंडित ।

चन्द्र कला को भी
देती जो कला निरन्तर ।

भाव भरा
रहता था
जिसका
हृदय

कमल-कोमल
अभ्यंतर ।

याद आ रहे
महा स्वयंवर में
आये थे
वाणासुर रावण जैसे
कितने ही योद्धा ।
सप्त द्वीप के
नव खण्डों के ।

प्रत्यंचा
शिव धनुष पर
चढ़ी नहीं किसी से ।

किन्तु वही धनु
खण्ड खण्ड हो गया
चमत्कृत राम
सोचते
वह सब क्या था ।

मुझे पता कुछ नहीं
हुआ कैसे
यह सब था,
मैं तो केवल
ध्यान कर रहा
था सीता का ।

जो मेरे भीतर
अधिवासिनि
बनी हुई थी।
मुग्ध
वचन मन प्राण
सभी
अर्पित थे उसको।

वही अयोध्या में आकर
हो गयी सुसज्जित
सबके उर में
सबकी प्यारी
राज दुलारी।

वही आज
कंटक वन-मग में
नग्न चरण
कर वरण पतिव्रत
भ्रमण कर रही
दुःख सह रही।
लक्ष्मण
वह तो बस
जैसी मेरी ही छाया।
प्राण–प्रभा
है एक
अलग केवल है काया।

मेरी सेवा में
निशि वासर
लगा हुआ है ।

निद्रा त्याग
अहार कंद फल
पूर्ण अखण्ड
तपस्या में रत,
तपोनिष्ठ
योगी सा
जीवन
साध रहा है ।
या कि
भातृ-सेवा की
सीमा बांध रहा है ।

सीता को
जननी कहता है ।
श्रद्धा भक्ति समेत
चरण पंकज
उर धर कर
वर्षा ताप
सभी सहता है ।

संवेदन से
भरा हृदय है
तन मन पुलकित ।

रोम-रोम में
स्नेह भाव
जागे कितने ही
राम यती से
जीवन-गति को
सोच रहे थे ।
भाग्यवान मैं हूं जो
पिता-वचन हित तत्पर
मात कैकई के
अनुशासन को
सिर धर कर,
आया वन में
तप करने को ।

धर्म अर्थ कामना
साध कर
मोक्ष वरण
करने को ।

इस सुयोग की
हेतु–सेतु कैकई ही तो
मन ही मन
करते प्रणाम हैं
राम जननि को ।
उस जननी को
जिसके वर से
मिला सुअवसर

रिषि मुनियों के
शुभ दर्शन का ।

जीवन
तप के सिवा
और क्या
हो सकता है ।

परहित जीवन
धन्य
व्यर्थ है
निज हित- साधन ।

मात-पिता ने दिया
मुझे वरदान अनोखा
क्यों न करूँ
निज आत्मभाव का
मैं आराधन ।

द्वितीय

राम
निरखाते रहे
प्रकृति-सुषमा अनियारी ।
जो सम्मुख ही
चारों ओर बिखेर
दिया था
चतुरानन ने ।

पाकर जम्बु रसाल
मधूकों की
वर शोभा ।
टेसू के शिर सजी
किरीटी वन्हि ज्वाल की ।

बिछी चतुर्दिक
श्यामल सस्य धरा
आसनवत् ।

स्नेह दान कर
करती
अवचेतन को चेतन ।
सीता
पर्णकुटी में

करती थी तैयारी
कंद मूल फल
भांति भांति के
व्यंजन कितने
सजा रही थी ।

चैत्र राम नवमी का
आया दिवस मनोहर
शीत ताप सम
शुभ बसंत का
मास सुवासित ।

आज राम का
जन्म दिवस है ।

मलय पवन
अर्पित करता है
नव पराग का
अर्घ्य मनोहर ।

वर्ष गांठ पर
आज राम की
जगंल में
मंगल छाया है ।

लक्ष्मण गये
संदेशा लेकर
वन्य जनों तक ।

पर्व अनोखा
मना रहे सब
जंगल वाले ।

दूर दूर ध्वनि
पड़ी सुनाई
मादल श्रृंगी और नफीरी
के स्वर गुंजित
दिशा-दिशा में ।

उर्ध्व गगन तक
पहुँच गई
नक्कारों की ध्वनि ।
कण कण में
आह्लाद भर गया
राम सुजस का ।

लक्ष्मण पड़े दिखाई
आगे-आगे चलते
और चल रहे
उनके पीछे
आदि वासियों के
दल के दल ।

नर्तन करते
मोद मनाते
उच्च स्वरों में

लोक गान का
गायन करते ।

युवती बृंद
सुसज्जित हैं
पुष्पों की छवि से
नर्तन करती
पर्णकुटी की
ओर आ रहीं ।

श्याम वर्ण
आभा से मंडित
दीप्त नयन खंजन में
भर अनुराग अलौकिक ।

सबने मिल कर
सजा दिये
जानकी गात पर
पुष्पों के
अनगिन आभूषण ।

कंकन, किंकिनि
हार मोतियों के
बेला की
नव कलियों के ।

कर्णाभूषण
दिव्य

शीश पर
पुष्पों की
मुक्तावलि न्यारी ।

पहन पुष्प परिधान
जानकी की वर शोभा
निरख-निरख
निज नयनों में
भरती कृतार्थता ।

देख रहे थे राम
मुदित मन
वन्य जनों के
भीतर से
अनुराग राग का
उमड़ा अम्बुधि ।

किन्तु स्मरण
आ रही अयोध्या
भीतर-भीतर
हृदय देश में
जैसे आकर
सिमट गयी है
निज वैभव ले ।
याद आ रहा
वर्ष गांठ पर

मात-पिता का
मोद मनाना ।

बंदी जन
चारण वृंदों का
मधुरिम गायन ।

पुरजन
परिजन वृंद
वृद्ध, बालक समूह का
पुष्प प्रवर्षण ।

चक्रवर्ति
दशरथ राजा की
भरी सभा में
होता उत्सव ।

कवि कोविद
संगीतकार
नर्तक समूह का
समुल्लास वह ।

गुरु वशिष्ठ का
आशीर्वचन
पुनीत प्राप्त कर,
माता पिता सभी से
जीवन की गति लेकर
राजकीय सज्जा से भूषित

होकर राज पथों में
रथ पर चढ़ कर जाना ।

याचक जन के
जय-जयकार
घोष को सुनकर
महाराज का
बाहर आना,
और याचकों को
भूषण, मणि
रत्न दान कर
कर देना
सम्पूर्ण मनोरथ ।

किन्तु
आज के
आनंदित क्षण
उससे न्यारे ।

धरा और
आकाश मनाते
वर्ष गांठ का
पर्व अनोखा ।

राम बैठ कर
चिंतन करते
इस सुयोग पर

जो छोटी माता के
पावन वर प्रसाद सा
उन्हें मिला था ।

पुलकित गात
रोम थे पुलकित
सीता की लख
दिव्य प्रभा को
जो सम्मुख आई थी
तत्क्षण ।

परा प्रकृति सी
ब्रम्ह सुकृति सी
तीन लोक
चौदहो भुवन की
जैसे संचित
रूप राशि सी ।

प्रकृति सुसज्जित
परम पुरुष के
सम्मुख जैसे ।

पूर्ण प्रभा-मंडल
आलोकित
सिमटी सी
आनंद राशि
सिमटा ज्यों सत् चित् ।

तृतीय

हर्षित गात
नाचते गाते
सभी राम तक आये ।

नारि वृंद ने
आकर चरणों में
नव पुष्प चढ़ाये ।

बालक वृद्ध
युवा वृंद्धों ने
पुष्प हार पहना कर
निज को किया कृतार्थ
राम छवि
नयनों में बैठा कर ।

नाना विध
फल मूल
कंद अर्पित कर
सम्मुख बैठे ।

सस्मित मुख
राजीवनयन ने
सबकी ओर निहारा ।

श्रद्धा निष्ठा
और आस्था
की प्रतिमूर्ति सभी थे ।

भारतीय संस्कृति–
काया के
मूलाधार
सबलतम् ।

निष्छल शांत
भाव परिपूरित
संगम हुआ मनोरम ।

सीता सहित
राम आसन पर
शोभित दिखते ऐसे
परम पुरुष की
सहचारी सी
बनी प्रकृति हो जैसे ।

लक्ष्मण बोले
हे रघुनंदन
शरणागत भवहारी ।

इन स्वजनों पर
कृपा भाव हो,
संत वृंद-सुखकारी ।

आये दूर-दूर से
प्रभुवर
मधुर वचन सुनने को

कहा राम ने
सुनो धरा के
पावन वीर सपूतो

तुमसे ही
भारत महान की
गरिमा है
ऊर्जस्वित।

सांस्कृतिक गौरव
विराट हो
तुम्हीं
धर्म के अनुचर।

सद्भावों की
निधि तरंग में
प्रवहमान है अंतर।

भारत की
धरती पावन है
इसमें बहती गंगा।

कृष्णा और
नर्वदा ताप्ती
गोदावरी सभी में।

भारतीय संस्कृति
बहती सी
सागर और नदी में।

जाने कितनी
पुराकाल-गाथायें
ये कहती है।

भारतीय संस्कृति
वह है
जो सदा
नयी रहती है।

रिषि मुनियों ने
इन नदियों के
तट पर वास बनाये।

सर्व भूत हित
रत रह कर जो
रहते हैं उपरामी।

धर्म कला
संस्कृति आराधक
नव समाज के साधक।

सदा मधुर
सौहार्द बांटना
सेवा भाव अनोखा।

परिचय तो
मेरा लक्ष्मण ने
बतलाया ही होगा।

आज कहूँगा
मैं तुम सबसे
अपनी वह
कुल-गाथा।

जिसको सुनकर
आप सबों का
ऊँचा होगा माथा।

मेरे ही
इस सूर्य वंश में
रिषि अगस्त्य थे जनमें।

जो आये थे
सर्व प्रथम
यह धरती
पावन करने।

मानवता संदेश
आर्यजन का
सबमें ही भरने।

रघु का नाम
प्रकाशित जग में
सूर्य प्रभा मंडल ज्यों।

दानी हुए महान
यहां तक,
दे डाला सब कुछ ही।

याचक
कभी नहीं लौटे
उनके समीप से।

बांट दिया सर्वस्व
स्वयं के लिए
नहीं कुछ छोड़ा।

स्वर्ण रत्न भंडार
सभी के लिए खुले थे।

राज भवन में
रहा न कुछ भी
एक दिवस राजा को
मिट्टी के पात्रों में
भोजन करते
सबने देखा।

उस राजा को
जो महान था।
जिसके उर में
जनमानस के
दुःख दूर करने का
व्रत था।

नृप हो गये
दिलीप
हमारे पूर्वज
ऐसे न्यारे,
गोसेवा व्रत
धारी थे
सबकी आंखो के तारे।

कठिन तपस्या में
जीवन भर
लगे रहे निष्कामी।

मेरे पिता
चक्रवर्ती नृप
अवधपुरी रजधानी।

सरयू तट पर
हुई अंकुरित
सूर्य वंश की आशा।

धर्म अर्थ कामना
मोक्ष की
जन की मिटी पिपासा।

विकसित परम्परा
जीवन गति
की श्रृंखला अनोखी।

मैंने कानों सुनी
और निज
मात-पिता में देखी।

मेरा जीवन
बने तपस्वी
नित प्रति परहितकामी।

जन-जन का
मैं किंकर
होना नहीं चाहता स्वामी

स्थापित हो धर्म
करूं सद्कर्म
यही आकांक्षा।

मेरे मन में
जन-जन की
सेवा की
केवल इच्छा।

जग में मानवता
विकसित हो
दानवता तम भागे।

यही चाहता
भारत भू पर
नया-नया
युग जागे।

❀

चतुर्थ

जन मन रंजन
मर्यादा पुरुषोत्तम
छवि से आलोकित
प्रतिक्षण
दुख हरते
दीन जनों के ।

रिषि मुनियों के
दर्शन करने
जाते सीता
लक्ष्मण के संग ।

दिवस बीतते ही
जाते थे
स्वप्न सरीखे ।

सीता
पति-सेवारत
रहती
सदा प्रफुल्लित
अनुपम छवि से ।

कभी कभी
मन में आ जाते

क्षण जो बीते
पिता-गेह में ।

पिता विदेह
योग पारंगत
अद्वितीय
दर्शन-मीमांसक ।

राज-काज-रत
रहते भी
तटस्थ रहते थे ।

ज्ञानी रिषि मुनि
शोधक, साधक
कवि कोविद
संगीतकार सब
कलाकार
नर्तन विद्या के
पारंगत
विद्वान विशारद
कितने ही
आते रहते थे ।

पाते रहते
यथायो य
अनुशासन अनुपम

ज्ञान और
विज्ञान कला का ।

उपनिषदों के
चिंतक कितने
करते तर्क
प्रमाणित होते
नये-नये सिद्धांत ।

जगत के
जीवन के
आदर्श
संवरते ही रहते थे ।

जिनके द्वारा
संस्कृति का
पोषण होता था ।

माता
पूर्ण सुशीला
पति-हित
करती चिंतन ।

राज्य और
ऐश्वर्य विधात्री
जनकपुरी वह
कभी याद
आ ही जाती थी ।

फुलवारी प्रसंग
धनु-भंजन
महा स्वयंवर
परशुराम आगमन
सोचकर
अब भी
हो जाती रोमांचित ।

किन्तु राम का
धैर्यशील मुख
सदा मधुर
सुस्मिति से पूरित ।

कभी नहीं
अवषाद भाव की
जिस पर रेखा ।

कभी न उभरी
आज भी नहीं
दिखती
चिंता की रेखायें ।

जबकि
दुःख वन में
हैं कितने ।
इससे उनका
धैर्य
न खोता ।

वह भी
मुसकाती
ही रहती ।

लक्ष्मण के संग
चर्चा में
बीतते
चले जाते दिन के दिन ।

मन न अघाता
लख प्राकृतिक
दृश्य मनभावन ।

स्रोतस्विनी
पुनीत धार नित
बहती रहती ।

पर्वत वन पुष्पों
कुंजों की
छटा मनोहर ।

मन के भ्रम को
हरती रहती ।

किन्तु किसे
था पता
अचानक
आ जायेंगे,

दुख की घनी
घटाओं वाले
काले बादल।

एक दिवस
लख
स्वर्णज्योति से
सज्जित मृग को,
दैव योग से
सीता बोली
ऐसा मृग
जीवन में
मैंने कभी न देखा।

राम स्वयं
अतर्यामी
सब जान बूझ कर
नर-लीला
करने हित तत्पर
दौड़ पड़े थे।
मृग के पीछे।

और लक्ष्मण
सेवा में
जानकी की रहे
प्रति क्षण तत्पर।

किन्तु वही
होता है
जीवन में
उद्घाटित
जिसके लिए
मिला जीवन यह ।

वही हुआ
जो कुछ
होना था ।

रावण
वेश तपस्वी का रख
आया सम्मुख
पर्ण कुटी के
किन्तु देख कर
लक्ष्मण को
छिप गया कुंज में ।

बीती घड़ियां
राम न लौटे
सीता
व्याकुल हुई
अचानक ।

नहीं जानती थी
अपने ही इन
वचनों से

अपहृत हो जायेगी
आगत होगा जो क्षण ।

गये लक्ष्मण
रावण योगी
भिक्षाटन के
मिस आया था
और जननि को
बलात लेकर
वह लंका की ओर
गया था ।

राम
देखकर
लक्ष्मण को
सब जान गये थे ।

कुछ अनिष्ट
होगा ऐसा
अनुमान गये थे ।

लौटे सत्वर
किन्तु
न सीता
वहां मिली थी ।

चले बन्धु द्वै
वन-वन खोज रहे सीता को ।

मिले जटायू
जर्जर मरणासन्न
वृद्ध अति
देकर संदेशा
सीता का
प्राण त्याग
सुरधाम गये थे ।

हनुमत
विप्र वेश
सुग्रीव मिताई होगी
बालि–मरण
अंगद–संरक्षण
जामवंत संग
बंदर भालु
समूह मिलेंगे ।

जो जो होगा
हुआ सभी वह ।

जो होना था
सम्मुख आया ।

राम–लक्ष्मण
कितने ही
दुख द्वंद झेलते
सेवरी के
जूठे फल खाते

भक्त जनों को
धैर्य बंधाते
आ पहुँचे
सागर के तट पर ।

आदि वासियों
भालु बंदरों की
सेना अभिनव
अपार ले ।

हनुमत के द्वारा
लंका का दहन
आदि कितनी
घटनायें
बीत गयी थीं ।

स्वप्न सरीखे
श्रम के बिन्दु
झलकते थे
मस्तक के ऊपर ।

और
राम
आ
बैठे थे
सागर के
तट पर ।

पंचम

सम्मुख महासमुद्र
नील जलराशि
नील-मणि शोभा।

तट पर
फैली है
सुदूर तक
ताड़ खजूरों की
नभ चुम्बित
हरीतिमा
सुखदायी।

अस्ताचल
जा रहे सूर्य की
सतरंगी किरणों से
इन्द्र धनुष छवि
सागर में
उतरी
दे रही दिखायी।

दूर छितिज पर
रक्तवर्ण

चित्रित हैं
दृश्य अनेकों ।

सरिता
झील सरोवर
रथ, गज बाजि
महाभारत के
जैसे लहूलुहान पड़े हैं ।

हनुमत
कहीं उठाये
गिरिवर
उड़े जा रहे
गदा उठाये ।

लख प्राकृतिक दृश्य
नभ की छवि
सोच रहे हैं राम
कि जैसे नई सृष्टि
रचने से पहिले
ब्रम्हा ने
नभ पट पर अंकित
पूर्ण सृष्टि का
मानचित्र कर दिया अनोखा ।

महामहिम
गौरव विराट

महिमा से मंडित
रत्नाकर
मणि कोष
प्रभा दीपित
अभ्यंतर ।

नव कुबेर
संचित निधियों का
संरक्षक
सागर महान है ।

सागर को
करके प्रणाम
ध्यानावस्थित हो
राम
सगर दिनकर वंशी का
स्मरण कर रहे ।

उनके ही
पूर्वज की महिमा
सागर
संज्ञा से
अभिभूषित ।

प्राणों की
वाणी से
निःसृत

सदप्रार्थना
समर्पित
करते थे
सागर चरणों में।

फिर
खुल गये
कपाट
हृदय के
शिव शंकर गौरापति
हर–हर महादेव
कैलाश
दिखे सब।

भारतीय
संस्कृति
स्वधर्म के
आदि देव
विज्ञान ज्ञान के।

नित्य प्रभापूरित
अनंत श्री से
अभिभूषित।
एक राट्
उद्भव
स्थिति के।

कला काव्य
नर्तन वादन के
सृष्टा स्वामी ।

पुराकाल–
इतिहास वेत्ता
कालजयी
मृत्युंजय
अवढर ।

परमहंस के हंस
समेटे पूर्ण विश्व को ।

उनके वाम अंग में
शोभित
महाशक्ति
उद्भव-स्थिति
संहारकारिणी ।

वंदनीय
पूजित
समष्टि की
अन्नपूर्णा ।
जगज्जननि
धात्री विधात्री ।

सिकता के
प्रशस्य

प्रांतर में
ध्यान-धारणा
समाधिस्थ
सविचार परिधि मे

निर्विचार की
ओर बढ़ रहे
पद्मासन निबद्ध
ग्रीवा रिजु
पलकें बन्द
नयन सुस्थिर मति ।

जागृत है
कुण्डलिनी–सीता
मूलाधार
चक्र से उठकर
सहज ऊर्ध्व है
प्राण-अस्मिता ।

स्वाधिष्ठान
और मणिपूरक
चक्रों को कर पार
अनाहत के
विस्तृत पथ
पार हो चुके ।

फिर खुल गये
विशुद्ध चक्र के

सब दरवाजे
ब्रम्ह रंध्र के द्वार
हुई प्रज्ञा प्रस्थापित।

त्रिकुटी मध्य
हुआ प्रतिभाषित
आज्ञा चक्र
विराट
सृष्टि–निर्देशन करता।

ज्योतिर्लिंग सदृश्य
शिव जहां हैं
अखण्ड तप-लीन।

द्वैत हुआ है दूर
देखकर
सहस्रार को,
पूर्ण कमल
विस्तारित
नभ सा।

राम
हो गये
आत्मलीन
प्रतिसांस
कह रही
सोहं सोहम्।

सीता–राम
अनादि ब्रम्ह के
द्वैत स्वरूप
जगत में आये
निज स्वरूप में
मर्यादा
स्थापित करने ।

कर राक्षस
संहार
संत जन का
हित करने ।

राम
आत्म दर्शन में
रत
निज प्रभा पुंज में
अवगाहन
करते
समष्टि का ।
उर निकुंज में ।

जैसे शिव की
हो समाधि
त्यों ही
भूधरवत्
अचल राम

निज में ही
सत्ता सिमटी जग की ।

सिन्धु विन्दु हो गये
धरा कण में सिमटी है ।

सांस–सांस
शिव की
ज्यों कहती
हुई शिवोहम्

वैसे ही
प्रतिध्वनित
हो रहा
भीतर–भीतर
मूल मंत्र
जैसे
"रामोहम्"

रामेश्वरम्
कृतज्ञ भावना
अनुप्राणित है
रोम–रोम में
हुआ "शिवोहम्" ही
रामोहम् ।

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या